# घर–घर पढ़ा जाने वाला उपन्यास

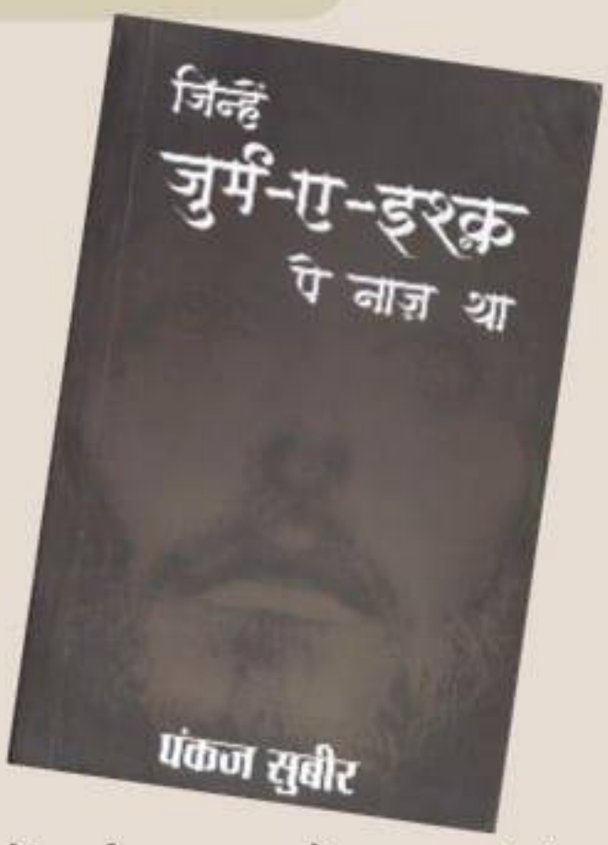


**'जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था'** (उपन्यास)
लेखक: **पंकज सुबीर**
प्रकाशक: **शिवना प्रकाशन,** सीहोर, मध्य प्रदेश-466001
समीक्षक: **सुधा ओम ढींगरा**
मूल्य: रु 200/- / पृष्ठ: 288

ऐसा अद्‌भुत उपन्यास बहुत कम पढ़ने को मिलता है। हिन्दी साहित्य में तो मैंने पहला ही पढ़ा है। समसामयिक, दुर्लभ, नाज़ुक, गंम्भीर और चिंतनशील विषय का कुशलता से निर्वाह किया गया है। गज़ब की क़िस्सागोई। जो विषय उपन्यास में उठाया गया है, वह विषय अपने आप में बहुत-सी भ्रांतियाँ, पूर्वाग्रह, संशय, विरोधाभास और प्रश्न समेटे हुए हैं। जिन्हें लेकर बुद्धिजीवी अक्सर द्वंद्व में और अंधविश्वासी भ्रम में रहते हैं। जिसकी थाह सही अर्थों में कोई नहीं पा सका, मगर अपने-अपने तरीकों से उसे परिभाषित ज़रूर कर दिया गया है। उपन्यास धर्म की भ्रांतियों, पूर्वाग्रहों, संशय और विरोधाभासों को स्पष्ट करता हुआ कई प्रश्नों के उत्तर देता है। पांच हज़ार साल के इतिहास को नई दृष्टि से देखा और परखा गया है। डैन ब्राउन ने 'डा विन्ची कोड' में बाइबल की थियोरी और सलमान रश्दी ने 'स्टैनिक वर्सेज़' में कुरआन में तथ्यों के अभाव पर रौशनी डाली है। पर पंकज सुबीर ने अपने उपन्यास 'जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था' में सभी धर्मों के मूल तत्व, जिस पर हर धर्म टिका हुआ होता है, की पड़ताल की है। मूल तत्व जिसे हर धर्म में भुला दिया गया है; जिससे हर धर्म का स्वरूप ही भिन्न हो गया है। काग़ज़ों पर लिखे शब्दों के अर्थों को ही बदल दिया गया है। अफ़सोस की बात है कि भारतीय दर्शन, मीमांसा, जीवन पद्धति तक उसे भुला चुके हैं। पाँच हज़ार साल के इतिहास, विभिन्न धर्मों पर किया गया शोध, हिन्दू धर्म की, इस्लाम की, यहूदियों की, क्रिश्चियन की, बौद्धों की, पारसियों की और जैन धर्म की तथ्यों से भरपूर ढेरों जानकारियाँ हैं। इतिहास को खंगालता, शोध परक और बौद्धिक श्रम लिए उपन्यास का एक-एक पृष्ठ भीतर के ज्ञान-चक्षु खोल देता है और उपन्यास हाथ से छूटता नहीं। लेखक ने निर्लिप्त होकर, निष्पक्ष लिखा है। उपन्यास पढ़ते हुए महसूस होता है जैसे किसी मलंग ने या सूफ़ी लेखक ने लिखा है, जिसके लिए सब धर्म एक बराबर हैं। न काहू से दोस्ती, न काहू से बैर.... बस सभी धर्मों का मूल मन्त्र, प्रेम, विश्वास और इंसानियत की पैरवी की है। 'जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था' एक रात का उपन्यास है। क़स्बे और उसके पास की बस्ती में किन्ही कारणों से दो सम्प्रदायों के मध्य दंगे शुरु हो जाते हैं। दंगे के कारणों को उपन्यास पढ़ कर ही जाना जा सकता है। दंगों से पैदा हुई दहशत, असुरक्षा और ख़ौफ़ की रात का इतना स्वाभाविक और बखूबी चित्रण किया गया है कि भय का कहर बरपाने वाली रात बेहद वास्तविक लगती है और पाठक स्वयं को दंगे में फंसा हुआ महसूस करता है। उपन्यास के मुख्य पात्र रामेश्वर का चरित्र शुरु से लेकर अंत तक बहुत परिपक्व और सुलझा हुआ रहता है। लेखक ने इस पात्र का निर्वाह बेहद कुशलता से किया है, बौद्धिकता से लबालब और संवेदना से भरपूर। रामेश्वर की कहन को जिस शैली में बाँधा गया है, वह अक्सर उन विदेशी उपन्यासों में देखने को मिलती है, जिनमें इतिहास के तथ्यों की पुष्टि की जाती है। 'जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था' ताज़ी हवा के झोंके-सा महसूस होता है, जो दिल दिमाग़ के सारे जाले साफ़ कर देता है। मुख्य पात्र रामेश्वर द्वारा विकास को कही गई कुछ बातें मन-मस्तिष्क पर गहरी छाप छोड़ती है- 'सुनो बच्चे ..... नफ़रत करना बहुत आसान है, लेकिन प्रेम करना बहुत मुश्किल है। इसलिए ये दुनिया आसान काम को ही चुनती है। मगर जीने का असली आनंद मुश्किल काम करने में ही है। मार देना बहुत आसान है, मगर बचा लेना बहुत कठिन है। इसलिए ज़्यादा लोग पहले वाले आसान काम को ही चुनते हैं। एक बात याद रखना भीड़ जिस भी दिशा में जा रही होती है वह दिशा और वह रास्ता हमेशा ग़लत होता है। भीड़ कभी सही दिशा में नहीं जाती है इसलिए क्योंकि भीड़ स्वयं नहीं चलती उसे चलाया जाता है।' ...

*(शेष पृष्ठ 69 पर)*

लगता है, कुछ भी नहीं है और कल्पना भर है सब कुछ, "कुछ तो है जो कि नहीं है हमारे बीच/ हम हैं ज़रूर"। लेकिन कुछ तो है दोनों के बीच जिसकी स्मृति मात्र शेष है, "तेरी निर्विकल्प मुस्कुराहट/ वो तेरा अपलक स्पर्श/ वो तेरी असंयमित साँसें/ वो तेरे एकांत के आल्हादित स्पंदनों की मधुरिम धुन"। "प्रेम किया था तुमसे"। एक अदृश्य स्वप्न से बँधे थे हम/ फिर क्यों बँधे थे हम/ अमूर्त से मूर्त तक/ नाकाम"।

कवि ने अपने प्रिय को वैसे ही खो दिया जैसे, "कुछ चीज़ें हम खो देते हैं/ उन्हें बचाने की कोशिश में"। कवि के मन में एक कसक है, "मिलना चाहता था मैं उससे"। "मैं फैला कर बाँहें/ आलिंगन की प्रतीक्षा में हूँ"। "बहुत दिन हो गये तुम्हारी आवाज़ सुने"। दरअसल प्रिय कहीं छूट गया, "न जाने कब निकल गये/ तुम मुझसे बहुत आगे/ और मैं रुका रहा उस एक ही जगह/ तुम्हारे लिए"। "लाँघ कर निकल गये तुम तो/ चुपचाप/ मेरे बीत चुके वुजूद को"। कवि सोचता ही सोचता है, "सोचता हूँ लौट जाऊँ पीछे/ छोड़ आया जहाँ/ तुम्हारी हथेलियों के ताप में खिलते कमल" । कवि निराश है, "झाँक मेरी शून्य आँखों में/ खाली कटोरे की उम्मीद"। प्रिय से अपेक्षा है कि "खोल अपने वातायन/ कि आ सकूँ मैं भी निर्विघ्न/ नितांत तेरेपन के साथ"।

एक बात स्पष्ट है कि कवि की उसके प्रिय से बचपन से दोस्ती है, बचपन से प्यार है, प्यार की स्मृतियाँ हैं और इस प्रेम में एकनिष्ठा है, "नहीं मिला/ तुम्हारे बाद कोई मेरे बचपन"। कभी-कभी अतीत की किसी पृष्ठभूमि में/ वादा है/ तुम तक लौटकर कभी/ मेरी आवाज़ भी नहीं आयेगी"।

कवि का ये भरत वाक्य महत्वपूर्ण है, "यह एक सुंदर प्रेम कहानी है दोस्तों !/ बेतरतीब / लेकिन सुखांत/ अगर कोई इसे सिलसिलेवार पढ़ सके"। मेरी भी यही कोशिश रही है।

समीक्षक संपर्क: 6 ए/705, कल्पतरु सेरेनिटी, महादेव नगर, मांजरी, पुणे - 412307 (महाराष्ट्र) मो.: 9460853736

*(पृष्ठ 67 का शेष)*

उपन्यास पढ़ते हुए ऐसी बहुत-सी बातें हैं जो जिज्ञासा बढ़ाती हैं, कभी मन विचलित होता है, कभी शांत तो कभी उद्वेलित। मुझे अंत बहुत प्रभावशाली लगा। बेहद सकारात्मक। दंगे के बाद जिस भारत का जन्म होता है, उसे हिन्दू और मुसलमान दोनों थामते हैं। 'जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था' उपन्यास एक भिन्न संदेश देता है और एक ऐसा पैग़ाम ले का आया है, जिसे पढ़ कर ही समझा जा सकता है।

समीक्षक संपर्क: 101, Guymon Ct. Morrisville, NC-27560, USA
ईमेल: sudhdrishti@gmail.com

## डॉ. ब्रजेश मिश्र का एक गीत

# क्षितिज के उस छोर पर

क्षितिज के उस छोर पर,
वह कौन हँसता ?

मदिर, मधुमय, मौन झरती चाँदनी में,
निशा की नि:शब्द तिरती रागिनी में,
मृदुल सुमनों की सुरभि-संवाहिनी में,
हृदय में उन्माद भरती यामिनी में,
अमिय-सा संचार चुप-चुप,
कौन करता ?

क्षितिज के उस छोर पर
वह कौन हँसता ?

मुदु उषा के विहँसते आलोक-जग में,
श्लथ धरा-उर सरसते आमोद नव में,
चेतना चैतन्य कर कर्त्तव्य-पथ में-
लक्ष्य के संधान का दे बोध मन मे-
आस औ' उल्लास बन कर ,
कौन तिरता ?

क्षितिज के उस छोर पर
वह कौन हँसता ?

वंचनाओं-कुटिलता से समर घन में,
यंत्रणाओं-विकलता से शिथिल तन में,
जगत्के दुर्गम, अजाने, विषम मग में,
आपदाओं-विफलता से विचल मन में,
प्रेरणा-विश्वास अभिनव,
कौन भरता ?

क्षितिज के उस छोर पर
वह कौन हँसता ?

संपर्क: 31/18, सिद्धार्थ कालॉनी, मुजफ्फरनगर। मो.: 9412211763